Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 9.134
Volume - 9, Issue - 1, January - 2026

DOIs:10.2018/SS/202601017 --:-- Research Paper / Article / Review

महर्षि वाल्मीकि के राम : एक 'जीवन-दृष्टि'

डॉ. वन्दना मिश्रा
असिस्टेंट प्रो. संस्कृत-विभाग
संत तुलसीदास पी0 जी0 कालेज, कादीपुर, सुल्तानपुर.
Email - ishekhar7@gmail.com

Abstract: वाल्मीकि रामायण में, राम को एक आदर्श मानव के रूप में चित्रित किया गया है, जिन्हें 'मर्यादा पुरुषोत्तम' कहा जाता है। वाल्मीकि की जीवन-दृष्टि में, राम केवल एक दिव्य अवतार नहीं, बल्कि एक ऐसा चरित्र हैं जो धर्म, कर्तव्य और नैतिकता के उच्चतम मानकों को स्थापित करते हैं। वाल्मीकि की जीवन-दृष्टि में राम एक ऐसे मार्गदर्शक हैं जो सिखाते हैं कि जीवन में धर्म, त्याग, करुणा और न्याय के पथ पर चलकर एक आदर्श और गरिमापूर्ण जीवन कैसे जिया जा सकता है, भले ही इसके लिए बड़े व्यक्तिगत बलिदान देने पड़ें। तुलसीदास के राम जहाँ साक्षात् ईश्वर हैं, वहीं वाल्मीकि के राम मानवीय भावनाओं (दुख, क्रोध, विरह) से युक्त हैं। वे सीता के खोने पर विलाप करते हैं और सामान्य मनुष्यों की तरह संघर्ष करते हैं, जो यह सिखाता है कि एक मनुष्य अपने आचरण से कैसे 'देवत्व' प्राप्त कर सकता है।

Keywords: राम की समावेशी जीवन-दृष्टि, संघर्ष, न्याय ।

तमसा नदी के तट पर पीपल के वृक्ष के नीचे एक ऋषि विचारमग्न थे। सुबह की वेला में नदी की लहरें शांत थीं। मंद हवा बह रही थी, जिनमें पत्तियां-डालियां हिल-मिल रही थीं। पंछी घोसलों से निकल आए थे और उड़ने की तैयारी कर रहे थे। इसी समय क्रौंच पक्षी का एक जोड़ा पास ही पेड़ की डाल पर बैठा कलरव कर रहा था। दोनों एक-दूसरे को चोंच मारते, पंख सहलाते, साथ-साथ उड़ान भरते और फिर डाल पर बैठ जाते थे। इस आमोद-प्रमोद से उनकी सृष्टि में अपार आनंद था। विचारमग्न ऋषि भी यह दृष्य देखते तो उनके भी होंठो पर मुस्कान आ जाती थी। यह क्रम चल ही रहा था कि एक शिकारी बाण संधान किए हुए वहां आ पहुंचा। उसने इधर-उधर देखा और फिर क्रौंच पक्षी की ओर दृष्टि जमा दी। अगले ही क्षण एक तीर सनसनाता हुआ नर पक्षी को भेद गया। वह चीत्कार करते हुए भूमि गिरा और उसने प्राण त्याग दिए। यह देख उसकी सहचरी क्रौंच विलाप करने लगी। अभी जहां कलरव था उस जगह शोक छा गया। विलाप करते हुए उसके भी प्राण निकल गए। यह दृष्य देख ऋषि गरज उठे, वेदना से उनका हृदय फट पड़ा और शोक श्लोक बनकर फूट पड़ा।

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः,
यत्क्रौंचमिथुनादेकम अवधी काममोहितम।।

यह ऋषि वाल्मीकि थे, जिनके मुख से अचानक फूट पड़ा यह श्लोक उनकी महान कृति रामायण का आधार बना। भारतीय जनमानस को उनके राम से मिलाने वाले महर्षि वाल्मीकि जन्मे भी थे तो शरद पूर्णिमा के दिन। जिसकी रात

में चन्द्रमा अपनी सोलह कलाओं के साथ, चांदी की तरह सफेद, आकार में कुछ बड़ा और शीतल किरणों के साथ आकाश में उपस्थित रहता है। वाल्मीकि एक पौराणिक कवि हैं और उनका लिखा यही एक ग्रंथ अस्तित्व में दिखता है। हो सकता है उनकी और भी रचनाएं रही हों, लेकिन रामायण जैसी लोकप्रियता हासिल न हो पाने के कारण कालखंडों का लंबा सफर तय न कर सकी हों। रामायण की भी लोकप्रियता इसलिए रही क्योंकि वह एक संपन्न राजकुमार की कहानी होने के बाद भी एक व्यक्ति के जीवन में आनी वाली सारी परेशानियों, उसकी कर्मठता और उसके संघर्ष का नितान्त व्यावहारिक चित्रण विवेचित करता है।

महर्षि वाल्मीकि भारतीय साहित्य और संस्कृति के महान स्तंभ हैं। उनकी रचनाएँ और शिक्षाएँ समय के साथ भी प्रासंगिक बनी हुई हैं। महर्षि वाल्मीकि का महाकाव्य हमें यह सिखाता है कि एक व्यक्ति अपने जीवन में कितनी भी कठिनाइयाँ और विसंगतियां झेल रहा हो, सत्य और धर्म के मार्ग पर चलकर वह महानता प्राप्त कर सकता है। उनके द्वारा रचित रामायण आज भी लाखों लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

शिवपुराण में कहा गया है कि दयालु मनुष्य के अभिमान शून्य व्यक्ति, परोपकारी और जितेंद्रीय ये चार पवित्र स्तंभ हैं, जो इस पृथ्वी को धारण किए हुए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये चारों गुण एक साथ मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र में समाहित होकर पृथ्वी की धारण शक्ति बन गए हैं। राम के इन्हीं वैयक्तिक सद्गुणों का उच्चतम आदर्श समाज के सम्मुख प्रस्तुत करना वाल्मीकि रामायण का प्रमुख उद्देश्य है। एक आदर्श पुत्र, आदर्श पति, भ्राता एवं आदर्श राजा- एक वचन, एक पत्नी, एक बाण जैसे व्रतों का निष्ठापूर्वक पालन करने वाले राम का चरित्र रेखांकित कर अहिंसा, दया, अध्ययन, सुस्वभाव, इंद्रिय दमन, मनोनिग्रह जैसे षट्गुणों से युक्त आदर्श चरित्र की स्थापना रामकथा का मुख्य प्रयोजन है। रामायण में वर्णित राम-लक्ष्मण-सीता ईश्वर स्वरूप हो सारे भरतखंड में पूजा-आराधना के केंद्र हो गए हैं। राम परिवार के वैचारिक, भाषिक एवं क्रियात्मक पराक्रम का वर्णन करना ही वाल्मीकि रामायण का प्रधान हेतु रहा है। ब्रह्माजी के मानस पुत्र नारदजी से एक बार वाल्मीकि ने प्रश्न पूछा था- 'संसार में गुणवान, वीर्यवान, धर्मज्ञ, उपकार मानने वाला दृढ़प्रतिज्ञ कौन है**?** ऐसा कौन सा महापुरुष है जो आचार-विचार एवं पराक्रम में आदर्श माना जा सकता है।' इस पर नारद का उत्तर था- 'राम नाम से विख्यात, वे ही मन को वश में रखने वाले महा बलवान, कांतिमान, धैर्यवान और जितेंद्रीय हैं।' उसी समय नारद ने अत्यंत भाव-विह्वल होकर संपूर्ण रामचरित्र वाल्मीकि के समक्ष प्रस्तुत किया।

वाल्मीकीय रामायण के लौकिक संस्कृत का प्रथम काव्य होने पर भी इसमें भारतीय धर्म, दर्शन,संस्कृति, राजनीति, शिल्प कला, साहित्य,संगीत, ज्योतिष, गणित, सांख्यिकी तथा अन्यान्य शास्त्रों का जैसा विशद, मनोरम, और सर्वांगीण चित्रण हुआ है, उसे देखकर सचमुच आश्चर्य होता है। इसे ऋषि की शालीनता अथवा विनम्रता ही समझना चाहिए कि उन्होंने महाभारतकार व्यास के समान यह गर्वोक्ति नहीं की-**'यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्'** अर्थात् यह ग्रन्थ ज्ञान-विज्ञान के सभी रूपों और भेदां को समेटे हुए है, अन्यथा यह सत्य है कि 'वाल्मीकीय रामायण'सभी विषयों का विशद वर्णन करने वाला तथा शास्त्रीयता को सरसता प्रदान करने वाला अद्भुत ग्रन्थ है।

अपनी जन्मभूमि को जननी के समकक्ष और स्वर्ग से भी अधिक सुखकर मानने की भावना सर्वप्रथम इस ग्रन्थ में ही मुखरित हुई है। लक्ष्मण लंका के वैभव और सौन्दर्य पर मुग्ध है, वह प्रकारान्तर से उस नगरी का आनन्द लेने की अपनी उत्सुकता का संकेत देता है परन्तु श्रीराम दृढ़ स्वर में कहते हैं-

अपि स्वर्णमयी लंका न मे रोचते लक्ष्मण।

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।

रामायण की लोक संस्कृति का विश्लेषण हिन्दू-धर्म के व्याख्याताओं और उन्नायकों का सदा से प्रिय विषय रहा है, और हमारे साहित्य में ऐसे लेख, ग्रंथ एवं काव्य बिरले ही मिलेंगे जिनमें राम की प्रस्तुति उनके अलौकिक चरित्र का कीर्तन अथवा एक मर्यादा-पुरुषोत्तम के रूप में लोकोत्तर विभूति के रूप में उनका चित्रण न किया गया हो। किन्तु आज के व्यावहारिक जगत् में हम अधिक रस किसी युग एवं व्यक्ति के लौकिक मूल्यांकन में लेने लगे है, किसी का निरा श्रद्धाजन्य वर्णन हमारी आंतरिक अभिरुचि को नहीं जगा पाता। राम राज्य अथवा रामायण काल प्राचीन भारतीय समाज का एक स्वर्णयुग था परन्तु उसका मात्र विशेषणों में वर्णन कर देने से उसके मात्र प्रशस्ति गान से हमारी जिज्ञासा तृप्त नहीं होती। भारत की लोक सांस्कृतिक परंपराओं को समझने के लिए रामायण में वर्णित सांस्कृतिक परिस्थितियों से सुपरिचित होना आवश्यक है, क्योंकि एक तो उनकी संस्कृति आज भी हमारे समाज में न्यूनाधिक रूप में परिलक्षित होती है और दूसरे, हमारी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति का राजनैतिक और सामाजिक जीवन का जैसा सजीव वर्णन उनमें मिलता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। महर्षि वाल्मीकि ने आर्य-संस्कृति के एक अतिशय प्राचीन एवं उत्कृष्ट युग को मानो साकार रूप में रंगमंच पर उपस्थित कर दिया है, और उसके सांस्कृतिक तथ्य मिस्र या बेबीलोन की तरह किसी मृत संस्कृति के निर्जीव उपलक्षण नहीं है, अपितु एक आत्मनिष्ठ और सुसंस्कृत जाति के अस्तित्व और सजीव चेतना के पुरातन प्रतीक हैं। प्राचीन आर्यों का मस्तिष्क उर्वरा और प्रतिक्षण जागरूक था। उन्होंने उदात्त और विचारोत्तेजक सिद्धान्तों की नव सृष्टि की, तथा उन्हें भाषा, संगीत और कला के माध्यम से हृदयग्राही रूप से अभिव्यक्त किया। भारत में स्पंदनशील कण बिखरे पड़े हैं, एक सूत्र में पिरोकर उनका पुनरुद्धार करने के लिए सामाजिक चेतना से भरपूर बौद्धिक प्रयास करने की आवश्यकता है।

वाल्मीकि रामायण के लोक जीवन के अध्ययन की केवल सैद्धान्तिक या शैक्षणिक महत्ता नहीं है,उसकी व्यावहारिक उपयोगिता भी है। रामायण आर्य संस्कृति की आधारशिला रही है। भारतीयों ने रामराज्य को सदा से सुराज्य का पर्यायवाची माना है और आज भी वही हमारी शासन व्यवस्था का आदर्श है। रामायण में उन कोमल भावनाओं का चित्रण है, जिनसे हमारा कौटुम्बिक जीवन ओत-प्रोत रहता है। हिन्दुओं की रीति-नीति कर्तव्य पालन का अनुकरणीय आदर्श उपस्थित करती है। अतः ऐसे अमर ग्रन्थ में लोक संस्कृति के व्यवस्थित अध्ययन की व्यावहारिक उपयोगिता प्रचुर भी है। सामान्य भारतीय रामायण काल को अपने इतिहास का स्वर्णयुग मानता है, किन्तु इस युग की सभ्यता और संस्कृति के विषय में उसकी धारणाएं अत्यन्त सीमित, अल्प, अपूर्ण, भ्रांत, निराधार एवं स्वनिर्मित है। रामायण के लोक जीवन के अध्ययन एवं विश्लेषण द्वारा उसकी इन धारणाओं का निराकरण भी किया जा सकता है और साथ ही साथ उसे भारत के एक चिरस्मरणीय युग का प्रामाणिक परिचय भी दिया जा सकता है। ग्रामीण जीवन लोक जीवन-सामाजिक जीवन के दो पक्ष होते हैं-शास्त्रीय और लोक। रामायण में एक ओर नगरीय जीवन की झांकी प्रस्तुत है तो दूसरी ओर ग्रामीण जीवन की। नगरीय जीवन में मुख्यतः जहाँ शास्त्रीय विधि-विधान का पालन होता है वहीं ग्रामीण जीवन में स्थानीय मान्यताओं, परम्पराओं, विश्वासों, रूढ़ियों का पालन किया जाता है। इनको शास्त्रीय विधि से कुछ लेना-देना नहीं होता। ये इनकी विरासत होती है। इसीलिए कहा जाता है कि लोक परम्परायें थोड़ी-थोड़ी दूरी पर बदलती हैं जबकि **शास्त्रीय प्रथायें सनातन रहती हैं।** उनमें बदलाव विशेष स्थिति में ही होता है। वाल्मीकि-रामायण को आदिकाव्य कहा जाता है और आर्षकाव्य भी। मानव जीवन को सार्थक बनाने में इस अनूठी रचना ने कुछ छोड़ा नहीं है। राम को महर्षि वाल्मीकि ने आदर्श मानवोत्तम माना है। नर में नारायण को उन्होंने देखा है। महर्षि वाल्मीकि का ऋण हमारे ऊपर इतना अधिक चढ़ा हुआ है कि उसे हम रामकथा में तदाकार हुए बिना चुका नहीं सकते। वाल्मीकि रामायण का

अनुसरण अन्य भाषाओं के महाकवियों ने भी किया है। निश्चय ही संसार में निहित हुए भी संसार सागर से पार उतार देने वाली यह कथा एक सुगम नौका है। इस अमर रचना के द्वारा एक ऐसा मार्ग प्रशस्त हुआ है, जो आत्मोत्सर्ग और आत्मोत्कर्ष के लक्ष्य तक हमें पहुंचा देता है। रामायण को फिर यह आशीर्वाद उपलब्ध है कि सृष्टि में जब तक सूर्य, चन्द्र, नदी, पवन, समुद्र आदि का अस्तित्व रहेगा, तब तक रामकथा की लोकप्रियता अक्षुण्ण बनी रहेगी।

यावत् स्थारयन्ति गिरयः सरितश्च महीतले,तावद् रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति।।

जैसा कि विदित ही है कि वाल्मीकि को इस ग्रन्थ की रचना की प्रेरणा ब्रह्माजी से प्राप्त हुई। ब्रह्माजी ने जहां महर्षि को रामचरित पर काव्य रचना करने के लिए कहा- **रामस्य चरितं कृत्स्नं कुरु त्वमृषिसत्तम।** वहां उन्हें अव्यक्त एवं अज्ञात तथ्यों के स्वतः ज्ञात हो जाने का आशीर्वादात्मक आश्वासन भी दिया-

वैदेह्याश्चैवयद् वृत्तं प्रकाशं यदि वा रहः।

तच्चाप्यविदितं सर्वं विदितं ते भविष्यति।।

इसके साथ यह आशीर्वाद भी दिया- **न ते वागनृता काव्ये काचिदत्र भविष्यति।**

कि तुम्हारी वाणी में सत्य का निवास होगा, कोई भी व्यक्ति तुम्हारे वर्णन पर सन्देह अथवा अविश्वास नहीं करेगा। वृहद् धर्मपुराण में तो यहां तक कहा गया है कि ब्रह्माजी ने व्यासजी को काव्यरचना में प्रवृत्त होने से पूर्व वाल्मीकीय रामायण को पढ़ने का परामर्श दिया- **पठ रामायणं व्यास काव्यबीजं सनातनम्।** आदिकवि के लिए जो आत्मदर्शन था, वही समाज के लिए जीवन दर्शन बन गया है। यही रामायण का सच्चा और सार्थक दर्शन है। जीवन का प्रमुख आधार जिजीविषा है जो कि रामायण की भाव भूमिका का भी मूल है।

भारत में लोकजीवन का व्यापक परिमाण है। मनुष्यों के अतिरिक्त परिवार के जीव जन्तु, पेड़-पौधे भी परिवार का अंग हैं। दूत भरत को बुलाने के लिए उनके नाना के यहां जाते हैं, भरत दूतों से पूछते हैं कि मेरे पिता महाराज दशरथ सकुशल तो हैं न, महात्मा श्री राम और लक्ष्मण नीरोग तो हैं न। धर्म को जानने और धर्म की ही चर्चा करने वाली बुद्धिमान् श्रीराम की माता धर्मपरायण आर्या कौशल्या को तो कोई रोग या कष्ट नहीं है। कथा वीर लक्ष्मण और शत्रुघ्न की जननी मेरी मझली माता धर्मज्ञा सुमित्रा स्वस्थ और सुखी है। वशिष्ठ और भरत भरद्वाज मुनि से मिलते हैं। इसके बाद अयोध्या, सेना, खजाना, मित्रवर्ग तथा मन्त्रिमण्डल का हाल पूछा। राजा दशरथ की मृत्यु का वृत्तान्त वे जानते थे, इसलिए उनके विषय में उन्होंने कुछ नहीं पूछा। आादिकवि महर्षि वाल्मीकि की दृष्टि में व्यक्ति की चारित्रिक विशेषताएँ आदर्शमय होनी चाहिए जिसका इस लौकिक जगत में अनुसरण किया ही जा सके साथ ही साथ वह देवत्व तक पहुँच जाय। उनके अनुसार चरित्र ही धर्म है। इस प्रकार श्रीराम का चरित्र लोकोपरि है जिसमें सम्पूर्ण धर्म का मूल सन्निहित है--

रामो विग्रहवान् धर्मः साधु सत्य पराक्रमः।

राजा सर्वस्य लोकस्य देवानामिव वासवः।।

रामायण में धर्म की श्रेष्ठता को इस प्रकार भी बतलाया गया है-

यस्मिंस्तु सर्वे स्युरसन्निविष्टा,धर्मो यतः स्यात् तदुपक्रमेत।

द्वेष्यो भवत्यर्थ परो हि लोके,कामात्मता खल्वपि न प्रशस्ता।।

उस कर्म को नहीं करना चाहिए जिस कर्म में धर्मादि सभी पुरुषार्थों का समावेशन न हो, हमें उसी कर्म का आरम्भ करना चाहिए जिससे धर्म की सिद्धि होती हो। लोक में वह सबके द्वेष का भागीदार बन जाता है, जो केवल अर्थपरायण होता है। धर्म विरोधी कार्य करने में अत्यन्त आशक्त होना, निन्दा की बात है, प्रशंसा की नहीं।

रामायणकालीन समाज में लोग यज्ञादि धार्मिक क्रियाओं के प्राबल्य के अलावा दान, तप, त्याग आदि का भी सम्यक विवेचन प्राप्त होता है, उस समय विभिन्न प्रकार के देवताओं-इन्द्र,वरूण, अग्नि, मरूत, वृहस्पति, सूर्यादि देवताओं के लिए आहुति दी जाती थी और जप-तप एवं यज्ञों के माध्यम से इनको प्रसन्न करने की चेष्टा की जाती थी। रामायणकालीन समाज में पर्वत, पहाड़, नदियाँ एवं वृक्षों को भी देवतुल्य स्थान स्थापित करके उनकी पूजा करने की प्रथा प्रचलित थी इसका बहुत ही सम्यक् वर्णन देखने को मिलता है-

राघवोऽपि महातेजा नावमारुहय तांततः।

ब्रहमवत् क्षत्रवच्चैव जजात हित्मात्मन :।।

आचम्य च यथा शास्त्रं नदीम् तं सहसीतया।

प्रणमत्प्रीति संतुष्टो लक्ष्मणश्च महारथः।।

अर्थात् श्री रामचन्द्र जी द्वारा वन में जाते समय नाव पर आरुढ़ होकर शास्त्र विधि के अनुसार आचमनादि करके सीता के साथ प्रसन्नचित्त होकर गंगा जी को प्रणाम किया और महारथी लक्ष्मण जी ने भी गंगा जी को मस्तक झुकाकर प्रणाम किया।

इस प्रकार आदिकाव्य रामायण का विधिपूर्वक अध्ययन करने से यह प्रतीत होता है कि इसमें धर्म को केवल साधारण अर्थ एवं स्वरूप तक ही सीमित न रखकर उसके बृहद स्वरूप का विवेचन किया गया है। धर्म के द्वारा व्यक्ति स्वयं के लिए निर्धारित कर्तव्यों का पालन करता था। जिससे सामाजिक नियंत्रण बना रहता था। सामाजिक वर्ण व्यवस्था के अनुसार सभी वर्णों के कर्त्तव्य निर्धारित थे और इन्हीं कर्त्तव्यपालन को ही धर्म की संज्ञा प्रदान की गई थी।

वर्तमान आर्थिक भौतिकवादी मशीनी युग में व्यक्ति का दृष्टिकोण, उसकी भावनायें, अभिलाषायें संकुचित हो रही हैं। पुराने मूल्यों के स्थान पर नवीन मूल्यों की स्थापना का प्रयास हो रहा है। एक ही परिवार में दो चूल्हे जल रहे हैं। वही रामायण में प्रतिपादित भारतीय जीवन में मिल बांटकर खाने की परम्परा है। इस नवीन मूल्यों के सन्दर्भ में प्राचीन शास्त्रों की समीक्षा एवं मीमांसा अत्यन्त आवश्यक है। नूतन भी ग्राह्य होना चाहिए यदि वह सुन्दर, कल्याणकारी तथा मानवीय गुणों से ओत प्रोत हो। अतः पुरातन तथा नूतन मूल्यों की समीक्षा तथा फिर सामंजस्य स्थापित करना लौकिक जीवन की सतत् प्रक्रिया है। रामायण उत्कृष्ट जीवन मूल्य स्थापित करता है। महर्षि वाल्मीकि की दृष्टि में धर्म केवल कर्मकांड नहीं, बल्कि जीवन का व्यावहारिक दर्शन है। श्री राम उनके लिए मर्यादा पुरुषोत्तम मनुष्य हैं, न कि निर्दोष देवता।

महर्षि वाल्मीकि ने श्रीराम को मानवीय दुर्बलताओं और संघर्षों के साथ प्रस्तुत किया। सीता निर्वासन का प्रसंग इस बात का प्रमाण है कि महर्षि वाल्मीकि ने राजधर्म और व्यक्तिगत धर्म के बीच के द्वन्द को ईमानदारी से चित्रित किया। उनकी भाव दृष्टि में धर्म का अर्थ है सत्य, न्याय, करुणा और कर्तव्य का समन्वय है। वाल्मीकि की भाव पूर्ण दृष्टि में सामाजिक और राजनीतिक चेतना स्पष्ट दिखाई देती है। राजधर्म, प्रजा पालन, न्याय व्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था, सभी पर उनके विचार शाश्वत बन पड़े हैं। राम का वनवास पिता की आज्ञा का सम्मान है, भले ही वह स्वयं दशरथ के लिए व्यक्तिगत रूप से कितना कष्टदायक हो। शबरी और निषादराज गुह के माध्यम से वाल्मीकि ने समाज

के अपेक्षाकृत विपन्न वर्गों के प्रति संवेदना व्यक्त की है। यह उनकी व्यापक सामाजिक भाव दृष्टि का परिचायक है। महर्षि वाल्मीकि की दृष्टि उनके काव्य शिल्प में भी प्रतिबिंबित होती है। श्लोक रचना, अलंकार, उपमा, रूपक, सभी में स्वाभाविकता है। उनकी भाषा सरल, प्रवाहमय और हृदयस्पर्शी है। वे कहीं भी कृत्रिमता का आश्रय नहीं लेते। युद्ध वर्णन में वीर रस, विरह प्रसंगों में करुण रस, प्रकृति वर्णन में शांत रस, सभी रसों का स्वाभाविक संचार उनके काव्य में है। यह काव्य शिल्प और भाव सौंदर्य का अद्भुत समन्वय वाल्मीकि को आदि कवि बनाता है। उन्होंने काव्य धारा के स्त्रोत से जो अविरल धारा उत्खनित की है वह निरंतर भी रही है।

महर्षि वाल्मीकि की भाव दृष्टि केवल एक काल या समाज तक सीमित नहीं है, वह शाश्वत और सार्वभौमिक है। वह केवल संस्कृत भाषा की पूंजी नहीं, वह ऐसी चेतना है जो अभिव्यक्ति है, इसीलिए हिंदी सहित प्रत्येक भाषा का मूल आधार बनी । उनकी करुणा, मानवीयता, धर्म बोध, प्रकृति प्रेम, और समग्र जीवन दृष्टि आज भी प्रासंगिक है। शाश्वत है महर्षि वाल्मीकि ने रामायण के माध्यम से न केवल एक महाकाव्य रचा, बल्कि जीवन जीने की एक पद्धति, एक दर्शन और एक आदर्श का समग्र संस्कार प्रस्तुत किया। एक संस्कृति की रचना की है। उनकी भाव दृष्टि हमें सिखाती है कि जीवन में संघर्ष, द्वंद्व और कठिनाइयां अनिवार्य हैं, लेकिन करुणा, धर्म, और मानवीयता के साथ इन्हें पार किया जा सकता है। वाल्मीकि सच्चे अर्थों में आदि कवि हैं क्योंकि उन्होंने काव्य को केवल शब्द विन्यास नहीं, बल्कि हृदय की अभिव्यक्ति, जीवन का दर्पण और मानवता का संदेश बनाया।

यह प्रमाणिक सत्य है कि श्रीराम एक आदर्श महापुरुष थे। परमात्मा या ब्रह्म नहीं थे। उनके कर्म, चरित्र और आदर्श इतने उच्च और महान् थे कि भक्ति भाव तथा आदर में हम उन्हें भगवान् कहते हैं। किसी को भगवान् शब्द से सम्बोधन करना, सबसे बड़ा उच्च सम्मान देना है। शास्त्र कहते हैं जिनके पास ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान, वैराग्य ये छः चीजें हैं। ये विशेषताएं व गुण वेद के शब्दों में भग कहताते हैं। उन्हें भगवान कहते हैं। श्रीराम के जीवन तथा आचरण में सभी देवोचित,पूज्य गुण, कर्म और स्वभाव थे। वे मानवता के आदर्श थे। आज जब संसार हिंसा, द्वेष और असहिष्णुता से जूझ रहा है, महर्षि वाल्मीकि की करुणामय भाव दृष्टि एक प्रकाश स्तंभ की तरह हमारा मार्गदर्शन कर सकती है। उनका संदेश सरल है। मनुष्य बनो, संवेदनशील बनो, धर्म का पालन करो, और सभी प्राणियों के प्रति करुणाभाव रखो। यही सच्ची मानवता है, यही जीवन का सार है। उनकी रचना से महर्षि वाल्मीकि किसी वर्ग मात्र के आराध्य नहीं वे मानव मात्र के वैश्विक नायक के स्वरूप में प्रतिष्ठित किए जाने चाहिए।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची :

1. मनुस्मृति-6/92
2. कणादसूत्र-1/2
3. वाल्मीकि रामायण-2/21/41
4. वाल्मीकि रामायण-3/37/13
5. वाल्मीकि रामायण-2/21/58
6. वाल्मीकि रामायण-2/39/20-21
7. https://www.aryasamaj.co.in/wp-content/uploads/2023/07/MaryadaPurushottamShriramKaPrerakSwaroo
8. https://hindi.webdunia.com/religion/religion/hindu/ramcharitmanas/valmeeki.htm